Chap-8

अष्टम अध्याय : महाराव लखपतिसिंह की अन्य साहित्यिक प्रवृत्तियाँ

अष्टम अध्याय

महाराव लखपतिसिंह की अन्य साहित्यिक प्रवृत्तियाँ

महाराव लखपतिसिंह के साहित्यिक व्यक्तित्व के कृतित्व-पक्ष के साथ साथ उनका साहित्य के पोषण, सम्वद्र्धन एवं सर्वविद उत्कर्ष और अभिवृद्धि से संबंधित प्रेरक-पक्ष भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है । वे अपने समय के बहुत बड़े साहित्य-संस्थापक थे । अपने दरबार में अनेक कवि, आचार्यों को आश्रय देकर उनके पोषण, प्रोत्साहन तथा प्रकर्ष के लिये कच्छ जैसे अहिन्दी प्रदेश में व्रजभाषा काव्यशास्त्र के अध्ययन-अध्यापन एवं प्रणयन के लिये उन्हों ने साहित्य-संस्था की स्थापना की थी जिस के दूरगामी परिणामों को देखते हुए उन को भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी जैसे हिन्दी साहित्य के आधुनिक युग-निर्माताओं की कक्षा में रखना अत्युक्ति नहीं होगी । प्रथम और द्वितीय अध्यायों के अन्तर्गत क्रमशः लखपतिसिंह की साहित्यिक पृष्ठभूमि एवं जीवनी का परिचय देते हुए उन की उपर्युक्त प्रवृत्तियों का सामान्य उल्लेख किया जा चुका है । यहाँ उन की इन प्रवृत्तियों का विशेष परिचय दिया जा रहा है जो उन के साहित्यिक व्यक्तित्व के परिपूर्ण अध्ययन के लिये आवश्यक है ।

लखपतिसिंह की उपर्युक्त साहित्यिक प्रवृत्तियों का अध्ययन[1] दो प्रधान शीर्षकों से किया जा सकता है :

(एक) लखपतिसिंह के दरबार की साहित्यिक प्रवृत्तियाँ, और

oooooooo

१ डॉ० कुँवरचन्द्र प्रकाशसिंह द्वारा लिखित शोध-निबंध, " भुज (कच्छ) की व्रजभाषा पाठशाला" के आधार पर यहाँ पाठशाला एवं लखपत-दरबार की साहित्यिक प्रवृत्तियों का अध्ययन प्रस्तुत किया जा रहा है ।

(दो) " महाराव श्री लखपत जी वृजभाषा काव्य-शाला, भुजनगर" की साहित्यिक प्रवृत्तियाँ । [२]

(एक) <u>लखपतिसिंह के दरबार की साहित्यिक प्रवृत्तियाँ :</u>

रीतिकालीन साहित्य राज्याश्रय में पला और पोषित हुआ । औरंगज़ेब की मृत्यु (सन् १७०७ ई०) के बाद मुग़ल सत्ता विकेन्द्रित होने लगी और उस का प्रभाव भारतीय कवि-कलाकारों के राज्याश्रय पर भी पड़ा, [३] परिणामस्वरूप व्रजभाषा के कवि छोटे-बड़े हिन्दू राजाओं का आश्रय ढूँढ़ने लगे । मुग़लकालीन वैभव-विलास और दरबारी प्रथाओं का अनुकरण करनेवाले बहुसंख्यक राजाओं ने अपने अहम् की तुष्टि और बड़प्पन दिखाने के लिये भी उन कवि-कलाकारों को राज्याश्रय दिया, परंतु इन आश्रयदाताओं में कुछ तो निस्सन्देह ही काव्य, कला, शास्त्रज्ञान आदि के सच्चे पारखी, जिज्ञासु एवं विद्वान् थे । पूर्ववर्ती अध्यायों के विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि महाराव लखपतिसिंह उनमें से एक थे । उनमें सच्चे आश्रयदाता के सभी गुण थे जिन से आकृष्ट होकर दूर दूर के कवि-कलाकार उनके दरबार में आकर, अपनी प्रतिभा दिखाकर, उचित सम्मान और प्रोत्साहन पाकर वहीं के होकर रह गये । उनके वंश परंपरागत चारण कवि हमीरदान रत्नूं, आचार्य कनककुशल और कुँवरकुशल, संगीताचार्य मयाराम चौहान और उनके पुत्र फकीरचंद (जिन्होंने व्रजभाषा में काव्य-रचना भी की है) उनमें प्रमुख हैं ।

२ डॅा० कुँवरचन्द्र प्रकाशसिंह ने " भुज(कच्छ) की व्रजभाषा पाठशाला " नाम दिया है परंतु वस्तुतः उसका वास्तविक नाम "महाराव श्री लखपत जी वृजभाषा काव्य-शाला, भुजनगर" ही था । विद्वान् लेखक ने पृ० ५० पर पाठशाला के एक विद्यार्थी जसकरणदान अचलदान के प्रमाण-पत्र की प्रतिलिपि और प्रतिच्छवि दी है उस से उपर्युक्त नाम ही प्रकाश में आता है । कदाचित् डॅा० कुँवरचन्द्र प्रकाशसिंह का ध्यान उक्त शब्दावली की ओर नहीं जा सका ।

३ " रीतिकाव्य की भूमिका ", पृ० ९, ले० डॅा० नगेन्द्र ।

यह हम देख आये हैं कि महाराव लखपतिसिंह के पूर्वजों में महाराव भारमल के समय से ही राजदरबार में कवियों को आश्रय देने की परंपरा थी जिसमें कच्छ के लोकसाहित्य और चारणी साहित्य का पोषण एवं संवद्र्धन हुआ । महाराव लखपतिसिंह के पिता देशल जी ने अपने समय के संत कवि दादा मेंकण को अपना गुरु माना था और उनमें बड़ी श्रद्धा रखते थे, जिसका सप्रमाण उल्लेख पूर्व के अध्यायों में किया जा चुका है । लखपतिसिंह के पूर्वजों में गुणसम्पन्न कवि-कलाकारों को राज्याश्रय देने की परंपरा थी, जिसका उन्होंने पूर्ण विकास किया । अत: उनके दरबार की साहित्यिक प्रवृत्तियों का आकलन के लिए सम्बन्धित कवियों के संक्षिप्त परिचय यहाँ प्रासंगिक ही होंगे ।

(१) हमीदान रत्नूं :

लखपतिसिंह के दरबार के कवियों में सर्वप्रथम स्थान उनके वंश परंपरागत चारण हमीरदान जी रत्नूं का आता है । [४] ये रत्नू शाखा के चारण थे और जोधपुर राज्यान्तर्गत घड़ोई ग्राम के निवासी थे । बचपन से ही ये कच्छ-भुज में रहते थे । ये महाराव लखपतिसिंह के कृपापात्र थे । कवि ने अपना परिचय देते हुए अपने आश्रयदाता के सम्बन्ध में भी लिखा है : [५]

" मुरधर देस सिवाना नगर मध्य उत्तन घड़ोई प्रसिद्ध अमीर ।

oooooooo

४ " राजस्थानी सब्द-कोस " के सम्पादक श्री सीताराम जी लालस ने लेखक के साथ चर्चा करते हुए कच्छ के जाड़ेजा राजपूत और रत्नू शाखा के चारणों के वंश परंपरागत सम्बन्धों को प्रकाशित करते हुए प्रमाणस्वरूप यह दोहा बताया था, जो यहाँ दिया जा रहा है :

" सौदा अर सीसोदिया, रोहड़ अर राठौड़ ।
दुरसावत अनै देवड़ा, जादव रत्नूं जोड़ ।। "

५ " राजस्थानी सब्द कोस ", प्रथम खण्ड, पृष्ठ १५७, संपादक, श्री सीताराम लालस ।

चारण " रतनू " कवियण चावौ, हरि रौ चाकर नाम हमीर ।।
जाडेचा सूरज राव जळवट, भुज भूपत लखपत कुळ भांण ।
त्रिय ग्रंथ कीध अजाची तिणरै, जोतिखि पिंगळ नांम सब्र जांण ।।"

ग्रन्थ :

श्री अगरचन्द जी नाहटा एवं श्री सीताराम जी लाल्स के अनुसार हमीरदान के ग्रन्थों की संख्या कम से कम नौ और अधिक के अधिक ग्यारह है । [६] परंतु दोनों विद्वानों द्वारा उल्लिखित सामान्य ऐसे आठ ग्रन्थों में दोनों के द्वारा अनुल्लिखित चार ग्रन्थों को मिलाने पर कवि के ग्रन्थों की कुल संख्या बारह होती है, जो निम्नलिखित है :

(१) लखपतिपिंगल (२) पिंगल प्रकास (३) हमीरनांम माला
(४) जदवंस वंसावलि (५) देसल जी री वचनिका (६) जोतिस जड़ाव

oooooooo

६ (एक) श्री अगरचंद जी नाहटा के अनुसार हमीरदान रतनू के लिखे नौ ग्रंथ हैं — (१) गुणपिंगल प्रकास (२) हमीर नाम माला (३) जदुवंश वंशावली (४) देसलजी वचनिका (५) लखपत गुण पिंगल (६) ज्योतिष जडाव (७) भागवत-दर्पण (८) ब्रह्मांड पुराण और (९) पिंगल कोष (" भुज(कच्छ) की ब्रजभाषा पाठशाला ", पृ० २०, लेʼडॉ० कुंवर चंद्र प्रकाश सिंह)

(दो) श्री सीताराम जी लाल्स के अनुसार इनके लिखे ग्यारह ग्रंथ हैं —
(१) लखपत पिंगळ (२) पिंगळ प्रकास (३) हमीर नांममाला
(४) जदवंस वंसावळि (५) देसल जीरी वचनिका (६) जोतिस जडाव
(७) ब्रह्मांड पुरांण (८) भागवत दर्पण (९) चाणक्य नीति
(१०) भरतरी सतक (११) महाभारत रौ अनुवाद छोटौ व बडौ ।
("राजस्थानी सब्दकोस", प्रथम खंड, पृ० १५८ संपादक: श्री सीताराम लाल्स)

नाहटा जी के बताये ग्रंथों में से एक का लाल्स जी ने और लाल्स जी के बताये ग्रंथों में से तीन ग्रंथों का नाहटा जी ने उल्लेख नहीं किया है, जिनको ऊपर रेखांकित कर दिया है ।

(७) ब्रह्माण्ड पुराण (८) भागवत दर्पण (९) पिंगल-कोष (१०) चाणक्य नीति (११) भरतरी सतक और (१२) महाभारत रौ अनुवाद छोटौ व बड़ौ ।

हमीरदान के लिखे पिंगलग्रंथ अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं जिन में राजस्थानी और व्रजभाषा में प्रयुक्त छंदों के लक्षणों को सोदाहरण स्पष्ट किया गया है । कवि ने लक्षणों के उदाहरणों में अपने आश्रयदाता महाराव लखपतिसिंह का गुणगान किया है । हमीर की राजस्थानी को तद्विदों ने पश्चिमी राजस्थानी माना है । [७] डॉ० कुँवरचन्द्र प्रकाशसिंह जी : " उन्हें व्रजभाषा का कवि मानने में भी कोई बाधा नहीं "[८] मानते ।

रत्नूं चारण शाखा की परंपरा वर्तमान काल तक चली आ रही है । कच्छ राज्य के राजकवि श्री शंभूदान ईश्वरदान " अयाची " इस परंपरा के वर्तमान वंशज हैं । उनके साथ लेखक की बातचीत से यह विदित हुआ कि वे व्रजभाषा के प्रेमी हैं । " महाराव श्री लखपत जी व्रजभाषा काव्य-शाला " के वे विद्यार्थी एवं अंतिम शिक्षक भी रहे हैं । उनके व्रजभाषा में रचित काव्य को देखने से, महाराव लखपतिसिंह के पूर्व से चली आ रही उपर्युक्त चारण-परंपरा के वर्तमान स्वरूप पर प्रकाश पड़ता है । यहाँ विशेष ध्यान देने योग्य बात यह है कि महाराव लखपतिसिंह द्वारा प्रस्थापित व्रजभाषा पाठशाला के अंतर्गत अध्ययन-अध्यापन करने के फलस्वरूप श्री शंभूदान जी के काव्य में राजस्थानी के बदले व्रजभाषा का प्रयोग हुआ है । [९]

कवित्त : " देखो ये दुनिका ख्याल, दिनद उदेहैं तोउ,
देखे ना उलुक ताको, दिनद कहा करे ।

०००००००

७ जोधपुर निवासी श्री सीताराम जी लालस से लेखक की हुई बातचीत से ।

८ " भुज(कच्छ) की व्रजभाषा पाठशाला", पृ० २० ।

९ " राष्ट्र ध्वज चित्रकाव्य अर्थ व विवेचन ", रचयिता- अयाची शंभूदान ईश्वरदान राज्यकवि, भुज (कच्छ)।

भील मल्याघर में, चन्दन जलाता तोऊ,
अर्पता सुवास आप, अंग में सहा करे ।
सुवरन सदा ही ताप, सहत अमाप पर
ताप में तपे तें आप, स्थान को लहा करें ।
तैसे मति मंद कोऊ, कहे कोडी क्रोड कापें,
जौहरी जवाहर की, किंम्मत कहा करें ।। "
("राष्ट्रध्वज चित्रकाव्य", छंद संख्या ५)

(२) आचार्य कनक कुशल :

महाराव लखपतिसिंह के दरबार के व्रजभाषा के प्रथम कवि के साथ साथ कनक कुशल उनके गुरु एवं व्रजभाषा पाठशाला के प्रथम आचार्य भी थे । ये विद्वान् जैन साधु थे जिनके संस्कृत एवं व्रजभाषा साहित्य के ज्ञान की कीर्ति सुनकर महाराव लखपतिसिंह ने उनको अपने दरबार में आमन्त्रित किया था :

" महाराव लषपति हुते जब हि कुमार पद ।
तब पढवै पर प्रीति बढी पूरन हिय गुन हद ।।
कनक कुशल विद्या निधांन मरुधरा स निवासी ।
हयां बुलाई दें मांन भूप राषा गुनरासी ।।
तिन अग्र आप अभ्यास करि । रेहा ग्रांम बकसीस में ।
दीनौ सुदांन देसल तनय । तुम षवात अब लौं हमें ।। "
(" खेंगार जस, कवि जीवन कुशल, छंद संख्या ९)

आचार्य कनक कुशल राजस्थान के किशनगढ नगर के निवासी थे । [१०] जैसा कि उपर्युक्त साक्ष्य से स्पष्ट है महाराव लखपतिसिंह ने उनको समुचित सम्मान एवं जीवन-निर्वाह के लिये रेहा नामक ग्राम का दान

oooooooo

१० " भुज (कच्छ) की व्रजभाषा पाठशाला ", पृ० २१

देकर अपना काव्य-गुरु बनाया ।

ग्रंथ :

आचार्य कनक कुशल के लिखे हुए दो ग्रन्थों का उल्लेख मिलता है ।[११] (१) " लखपति मंजरी नाममाला " और
(२) " सुंदर शृंगार की रसदीपिका भाषा टीका " ।

पूर्ववर्ती विवेचन के अंतर्गत यह दृष्टिगत किया जा चुका है कि कच्छ जैसे अहिंदी प्रदेश में व्रजभाषा में लिखी गई नाममालाएँ स्वयं लखपतिसिंह एवं व्रजभाषा के अन्य जिज्ञासु कवि-विद्यार्थियों के व्रजभाषा-ज्ञान के विकास के लिये अत्यंत महत्त्वपूर्ण थीं । आचार्य कनककुशल की इस रचना से कच्छ में व्रजभाषा की शिक्षा में पर्याप्त सहायता पहुँची । कनक कुशल विरचित " लखपति मंजरी नाम माला " की विषय-वस्तु का परिचय निम्न-लिखित पद्यों से मिल जाता है :

" आपु कह्यौ इकु अंक की । तिनि सौं सहित सनेह ।
निगम सुगम सी नांम की दांम (म) ली कर देहु ।
तिनि हिति त्रिपुरा पूजि पद । इंदीवर अभिरांम ।
कनक कुशल कवि रचना करत है दुलह नांम की दांम ।।
मुख्य जांनि व्याकरन मत । समुझहु यह सिद्धांत ।
शब्द सुरांतह सांत कौं पद कीजै प्रथमांत ।।
श्री पति अरु पुल्लिंग सुर । सुनि जै स्वल्प समर्थ ।
अव्यय विधि लखपति अतुल । ए अकार कैं अर्थ ।।
आ कहि पुं सुर वचन आ । अव्यय सुमिरन आहि ।
सौ सुमिरन सिव कौं करत । चतुर लखपति चाहि ।। "

(" लखपत मंजरी नाममाला, " छंद १०१ से १०५)

००००००००

११ वही, (" भुज (कच्छ) की व्रजभाषा पाठशाला ") पृ० २५ ।

उपर्युक्त उद्धरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि आचार्य कनककुशल ने ब्रजभाषा के व्याकरण का ज्ञान देने के लिये नाममाला लिखी थी ।

आचार्य कनककुशल ने युवराज लखपतिसिंह को नायिका-भेद विषयक ज्ञान देने के लिये ब्रजभाषा के प्रसिद्ध कवि सुंदरदास कृत " सुंदर शृंगार " की " रस दीपिका भाषा टीका " लिखी । यह उनकी दूसरी रचना है । कनककुशल ने टीका में ब्रजभाषा गद्य का भी प्रयोग किया है । ब्रजभाषा-गद्य का यह उदाहरण द्रष्टव्य है :

> " अथ भूषन बसन वर्ननं । अथ सवैया । सखी की उक्ति नायिका सौं अति सुंदरता बखानै है जोवन कौ जोवनु० जोवन जाकौ जोवन सो कहा उलटौ जोवन कौं दिपावै अरु सिंगार कौ सिंगार सो कहा उलटौ सिंगार कौं सोभा चढावे ऐसें रूप ही कौ रूपु इहिं भांति के तेरे अंग देषियतु है कहा निहारियतु है - - - - - "

महाराव लखपतिसिंह के दरबार में आचार्य कनक कुशल का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है । उनकी विद्वत्ता और आचार्यत्व के बल पर ही महाराव लखपतिसिंह की ब्रजभाषा-शिक्षा और काव्य-शास्त्र विषयक ग्रंथों के प्रणयन की योजनाएँ कार्यान्वित हो सकीं।*

(२) आचार्य कुँवर कुशल :

ये आचार्य कनक कुशल के शिष्य थे जो उनके साथ महाराव लखपतिसिंह के दरबार में आये थे । अपने आश्रयदाता को उन्होंने अपने काव्य-शास्त्र के ज्ञान से प्रभावित किया था । आचार्य कनक कुशल के पश्चात् ये ही ब्रजभाषा पाठशाला के आचार्य नियुक्त हुए । महाराव लखपतिसिंह और उनके उत्तराधिकारी गौड़जी दोनों के राज्यकाल में वे सम्मानित रहे ।

इसलिए उनकी रचनाएँ दोनों आश्रयदाताओं को समर्पित की गई हैं । उनके ग्रंथों की संख्या नौ बताई जाती है,[१२] जिनके नाम इस प्रकार हैं :

(१) लखपति मंजरी नाम माला (२) पारसति नाम माला

(३) कवि रहस्य (४) गौड़ पिंगल

(५) लखपति जससिन्धु (६) लखपति स्वर्ग प्राप्ति समय

(७) महाराव लखपति दुवावैत (८) मातानो छंद

और

(९) रागमाला ।

आचार्य कुँवर कुशल लिखित ग्रंथों की कुल संख्या नौ न होकर आठ है । उपर्युक्त नौ ग्रंथों में से " कवि रहस्य " और " लखपति-जससिन्धु " दो अलग ग्रंथ न हो कर एक ही ग्रंथ के दो नाम हैं । उस की प्रत्येक तरंग के अंत की पुष्पिका को देखने से ही उपर्युक्त तथ्य का प्रमाण मिल जाता है । किसी तरंग में " कवि रहस्य " तो किसी में " लखपति-जससिन्धु " नाम का उल्लेख मिलता है । मात्र आदि और अंत के अंशों का आधार लेने एवं संपूर्ण ग्रंथ न देखने के कारण इस एक के बदले दो दो ग्रंथों की अवस्थिति का भ्रम हुआ हो, यह संभव है ।

आचार्य कुँवर कुशल के उपर्युक्त ग्रंथों में नाम माला, पिंगल आदि काव्य-शिक्षा के ग्रन्थों की प्रधानता है जो उनकी आचार्यत्व की प्रवृत्ति के परिचायक हैं । अध्ययन-अध्यापन के लिये नाममालाओं के महत्त्व की चर्चा पूर्व के अध्यायों में की जा चुकी है । यहाँ उनके काव्य-शास्त्रीय ग्रन्थों के महत्व का परिचय दिया जा रहा है ।

" कवि रहस्य " उनका सब से अधिक महत्त्वपूर्ण काव्य-शास्त्रीय

oooooooo

१२ " भुज(कच्छ)की व्रजभाषा पाठशाला ", पृ० २७, लें० डॉ० कुँवर चन्द्र प्रकाशसिंह ।

ग्रन्थ है । इसमें कुल १३ तरंगें हैं । क्रमशः उनमें लखपतिवंश-वर्णन, भुज शहर का वर्णन, कवि-पाठ-वर्णन, काव्य के लक्षण, प्रयोजन, कारण आदि, शब्द-शक्ति, ध्वनि-निरूपण, मध्यम काव्य-निरूपण, कवित्त दोष-निरूपण, गुण-अलंकार-भेद, शब्दालंकार-निरूपण, यमक-लक्षण, चित्रालंकृति-वर्णन, शब्दालंकार-अर्थालंकार-संसृष्टि, संकर-निरूपण । यह ग्रंथ १३६७ छंदों में समाप्त होता है । इसकी काव्य-शास्त्रीय विषयवस्तु का मूल्यांकन करते हुए डॉ० कुँवर चन्द्र प्रकाशसिंह ने उचित ही लिखा है कि, " इन दोनों (" कवि रहस्य " और " लखपति जससिंधु") ग्रन्थों में केशवदास जी के द्वारा प्रवर्तित हिन्दी की आचार्य-परंपरा रीतिकाल के अंतिम चरण में चरमोत्कर्ष की स्थिति में दिखाई पड़ती है । " [१३]

आचार्यत्व के क्षेत्र में उन्होंने महत्त्वपूर्ण कार्य किया है । " लखपति जस सिंधौ " की रचना उन्होंने संस्कृत के प्रसिद्ध आचार्य मम्मट के काव्य प्रकाश के अनुकरण पर की है :

" पाय लषपति कौ हुकम रचत रुचिर मनराषि ।
श्री लषपति जससिंधु यह शुभ मम्मट मत साषि ।।"

इसके वर्ण्य-विषय के उपर्युक्त परिचय से ही इसका काव्य-शास्त्रीय महत्त्व स्पष्ट हो सकता है । उन्होंने अपने गुरु कनककुशल की भाँति व्रजभाषा-गद्य का भी प्रयोग किया है । " कवि रहस्य " में व्रजभाषा के पुराने गद्य का उदाहरण मिलता है जो विशेष अध्येता के अध्ययन का विषय है । यहाँ एक उदाहरण द्रष्टव्य है :

" तत्व नियति कृत नियम रहित तिनि सौं यह राजै ।
येकमयी आनंद बीच में नहीं बिराजै ।।

0000000

१३ द्रष्टव्य : " भुज(कच्छ) की व्रजभाषा पाठशाला", पृ० २७ ।

रस नव रचना रची छत्र ज्यौं छिति पैं छाजी ।
गुरुता लीन्हैं गात सुगुन की धुनि सौं गाजी ।।
सुप्रसन्न बुद्धिदाई सुयस भजत होत सब दूरि भय ।
सुखदाय सदा कवि की सरस जबर भारती मात जय ।।१।।

।। टीका ।। इहां ग्रंथ की आदि तीन भांति कौ मंगलाचरन होत है ।। एक आशीर्वाद मंगलाचरन ।। दूसरौ ~~न~~ नमस्कार मंगलाचरन है ।। तीसरो वस्तु निर्देशात्मक मंगलाचरन है ।। इहां कवीसुर की भारती जयवंत रहो यह वस्तु दिषाई ।। सो भारती कैसी है ।। नियति तत्व कियो जो नेम तासौं रहित है ।। एकमयी कहते एक कवीसुरनि मैं है और मैं नहीं ।। नवरस रचना मैं रची है । बहुत शोभत है । बडाई कौ शरीर है ।। सुगुन धुनि सौं गाजत है ।। प्रसन्न है । जा कौ भजन किये तैं बिघन दूरि भगत है । बुद्धि की दैंन हार है । यस की दैंन हार है । सुष की दैंन हार है । ~~सुष क~~ अैसी कवीसुर की भारती जो सरस्वती जयवंत रहो ।। इहां देवरति भाव ध्वनि है ।। "

(" लखपति जससिंधु", प्रथम तरंग, छं०सं० १)

कुँवर कुशल के आचार्यत्व के साथ साथ उनकी कवित्व-शक्ति भी प्रशंसनीय है । निम्नलिखित उदाहरण द्रष्टव्य हैं :

(एक) " माय जसोदा सौं आय कह्यौ दधि दै पकरी कमरी की किनारी ।
ढील करौ टुक बैठो ललाजु बिलोकन दै क्यौं न तो बलिहारी ।
रीस चढी तब लैटि परे क्यौं मनवति है जननी अनि नारी ।
माषन और तिरीछैं चितैं मुसकैंन मनैं अंषियां न उघारी ।। "

(" लखपति जससिंधौ", तेरहवीं तरंग, ग्रंथ पत्रांक १८५, छंद ८६)

(दो) बालकृष्ण के हठ के ~~स~~ उपर्युक्त वर्णन के बाद नायिका की चेष्टाओं

के वर्णन का यह उदाहरण द्रष्टव्य है :

" भुवन के द्वार षरी अरन कौं पसारि
पाछैं ल्ये हैं उसारि कैसी करि चतुराई है ।
सीस कौं बसन षैंचि घूंघटा कियो है
आगैं नैंननि कौं मूंदि ग्रीवा नीचैं कौं नवाई है ।
मुष मौंन राषि बाहु लता कौं
बिथार करि फेरि जोरि लई बात दुहूं मन भाई है ।
मदनगुपाल जू कौं दूरि ही तैं देषत ही
चेसटा दिषाय राधे बात समझाई है ।। "
(" वही,"पंचम तरंग, छं०सं० १५)

महाराव लखपतिसिंह के दरबार के प्रधान कवि-आचार्यों में उपर्युक्त कवियों की प्रधानता थी । उनके द्वारा ही लखपत-दरबार का साहित्यिक वातावरण पल्लवित और पुष्पित हुआ ।

आचार्य-परंपरा :

व्रज भाषा पाठशाला के आचार्यों की परंपरा दीर्घकाल तक चली । कुँवर कुशल के बाद वीर कुशल, सिरदार कुशल, गुलाब कुशल, लक्ष्मी कुशल, कल्याण कुशल, विनीत कुशल, ज्ञान कुशल, कीर्ति कुशल, मुनि गुलाल कुशल, वल्लभ कुशल तथा उनके शिष्य जीवन कुशल तक यह परंपरा चली । ऐसा माना जाता है कि जीवन कुशल के विद्याभ्यास काल में ही उनके गुरु वल्लभ कुशल जी की मृत्यु हो जाने से महाराव प्रागमल ने किसी पुरुषोत्तम नामक ब्राह्मण को व्रजभाषा पाठशाला की व्यवस्था सौंप दी और उनको आचार्य नियुक्त किया ।[१४] उनके बाद प्राणजीवन त्रिपाठी प्रधानाचार्य

---

१४ द्रष्टव्य : " जीवन कुशल का पत्र ", बड़ौदा विश्व विद्यालय के हिन्दी विभाग के हस्तलिखित ग्रंथ संग्रह में प्राप्य है ।

हुए । उनके समय के बाद इस परंपरा का चित्र बड़ा अस्पष्ट है ।

(दो) " महाराव श्री लखपत जी व्रजभाषा काव्य-शाला " :

महाराव लखपतिसिंह के काव्य-प्रेम, काव्य-शास्त्र के व्यवस्थित अध्ययन के प्रति विशिष्ट अभिरुचि, जिसका विवेचन द्वितीय अध्याय के अन्तर्गत किया जा चुका है, का ही यह सुफल था कि उन्होंने कच्छ जैसे अहिन्दी प्रदेश में व्रजभाषा के काव्य-शास्त्र के अध्ययन-अध्यापन के लिये स्थायी व्यवस्था के रूप में व्रजभाषा पाठशाला की स्थापना की । इसमें निश्चित समयावधि में नियत अभ्यासक्रम का अध्ययन करके उत्तीर्ण होनेवाले विद्यार्थी को " कवि " की उपाधि दी जाती थी । उसकी सामान्य व्यवस्था, पाठ्यक्रम, परीक्षा-विधि तथा उसमें से उत्तीर्ण विद्यार्थियों का संक्षिप्त परिचय दिया जा रहा है ।

सामान्य-व्यवस्था :

आचार्य कनककुशल की सुयोग्य अध्यक्षता में इस पाठशाला का संचालन प्रारम्भ हुआ । महाराव लखपतिसिंह ने पाठशाला के समुचित निर्वाह के लिये " रेहा " नामक ग्राम का दान किया, जिसकी आय वार्षिक तीन हज़ार रुपयों की थी । पाठशाला के अध्यक्ष का जीवन-निर्वाह और प्रत्येक कवि विद्यार्थी की पढ़ाई, रहने एवं खाने-पीने के खर्च की व्यवस्था इस से होती थी । पाठशाला की इस सामान्य आर्थिक व्यवस्था में कोई विशेष व्यवधान उपस्थित नहीं हुआ । महाराव लखपतिसिंह के उत्तराधिकारियों ने उसके निर्वाह की उचित व्यवस्था की ।

पाठ्य क्रम :

इस पाठशाला के पाठ्यक्रम में जो पुस्तकें पढ़ाई जाती थीं

उनकी सूची इस प्रकार मिलती है :

(१) भाषा व्याकरण , (२) मान मंजरी नामक कोष
(३) अनेकार्थ मंजरी (४) छंद शृंगार पिंगल (५) चिंतामणि पिंगल
(६) छंद भास्कर पिंगल (७) हमीर पिंगल (८) लखपति पिंगल
(९) नागराज पिंगल (१०) भाषाभूषण (११) बंशीधर अलंकार-ग्रंथ
(१२) कवि प्रिया (१३) रस रहस्य (१४) काव्य कुतोहल (१५) रसिक प्रिया (१६) सुन्दर शृंगार (१७) बिहारी सतसई (१८) वृंद सतसई
(१९) देवीदास कृत राजनीति (२०) नाथूराम कृत राजनीति
(२१) सुन्दर विलास (२२) ज्ञान समुद्र (२३) पृथ्वीराज रासो
(२४) अवतार चरित्र (२५) कृष्ण बावनी (२६) कवित्त बंध रामायण
(२७) रामचंद्रिका (२८) रागमाला (२९) सभाविलास । [१५]

उपर्युक्त पाठ्यक्रम में तीन प्रकार के ग्रंथों को प्रमुखता दी गई थी : (१) व्रजभाषा-ज्ञान विषयक ग्रंथ (२) काव्य-शास्त्रीय ग्रंथ और (३) प्रसिद्ध साहित्य-कृतियाँ । इसके अतिरिक्त तत्कालीन राजकीय वातावरण को लक्षित करते हुए पाठशाला के कवि-विद्यार्थियों के कवि-जीवन में उपयोगी ऐसे विषयों के प्रसिद्ध ग्रंथों को भी पाठ्यक्रम में उचित स्थान दिया गया था । पाठ्यक्रमगत उपर्युक्त ग्रंथों का विषयानुसार पृथक्करण करने से उन की उपयुक्तता एवं महत्त्व पर प्रकाश पड़ता है ।

व्रजभाषा-ज्ञान के लिये " भाषा-व्याकरण", " मानमंजरी कोष", " अनेकार्थ मंजरी " का अध्ययन अहिन्दी भाषी विद्यार्थियों के लिये अनिवार्य ही है ।

0000000

१५ द्रष्टव्य : " भुजमां कविता शाला विषे " शीर्षक लेख, ले० कवि दलपतराम, " बुद्धि प्रकाश", सन् १८५८, पृ० १०५ ।

काव्य-शास्त्र के अध्ययन के लिये चुने गये ग्रंथों में " छंद शृंगार पिंगल", " चिंतामणि पिंगल", " छंद भास्कर पिंगल", " हमीर पिंगल ", " लखपति पिंगल ", " नागराज पिंगल", " भाषा-भूषण ", " बंशीधर अलंकार-ग्रंथ", कवि-प्रिया ", " रसिकप्रिया", " सुन्दर शृंगार ", " रस रहस्य", " काव्य कुतोहल " -- ये ग्रंथ अपने अपने विषय के प्रसिद्ध एवं प्रतिनिधि ग्रंथ हैं । कवि-शिक्षा देनेवाली इस पाठशाला के पाठ्यक्रम में उपर्युक्त ग्रंथों का महत्त्वपूर्ण ही नहीं अनिवार्य स्थान था । हिन्दी के रीतिकाल के प्रसिद्ध आचार्य-कवियों में से चिंतामणि, महाराज जसवंतसिंह, केशवदास, सुन्दरदास (शाहजहाँ के आश्रित कवि सुन्दरदास) के काव्य-शास्त्रीय ग्रंथों को स्थान दे कर इस पाठ्यक्रम को अत्यंत उपयोगी बनाने के साथ साथ गुजरात प्रदेश में हिन्दी-क्षेत्र की काव्य-शास्त्रीय परंपरा की शिक्षा देने का सुयोग्य माध्यम भी बनाया गया । काव्य-शास्त्रीय अध्ययन में पिंगल, अलंकार, नायिका-भेद के विषयों की व्यवस्था की गई ।

उपर्युक्त पाठ्यक्रम की यह विशेषता है कि इस में काव्य के शास्त्र-पक्ष के साथ साथ उसके व्यवहार-पक्ष के अध्ययन की भी समुचित व्यवस्था की गई थी । " पृथ्वीराज रासो", " बिहारी सतसई ", " वृंद सतसई ", " रामचंद्रिका" आदि हिंदी की प्रसिद्ध साहित्यिक रचनाओं का भी अध्ययन इस पाठशाला में करवाया जाता था । साथ ही तत्कालीन राजकीय वातावरण के अनुकूल राजनीति, धर्मज्ञान, संगीतादि विविध विषयों की जानकारी के लिये तद्विषयक प्रसिद्ध ग्रंथों को भी प्रस्तुत पाठ्यक्रम में स्थान दिया गया था ।

परीक्षा विधि :

इस पाठशाला का उपर्युक्त पाठ्यक्रम प्रत्येक विद्यार्थी को पाँच वर्षों की समय सीमा में तैयार करना पड़ता था । विशिष्ट प्रतिभासम्पन्न

विद्यार्थी के लिये यह समय कम से कम दो वर्षों का था ।[१६] उपर्युक्त निर्धारित पाठ्यक्रम का अध्ययन पूर्ण होने के पश्चात् विद्यार्थी की परीक्षा ली जाती थी । विद्यार्थियों के काव्य-शास्त्र के ज्ञान एवं काव्य-रचना-शक्ति की परीक्षा होती थी । समस्या-पूर्ति और बारुनी की रचना के द्वारा उसकी इस शक्ति का परीक्षण किया जाता था । उत्तीर्ण विद्यार्थी को ही " कवि " की उपाधि प्राप्त हो सकती थी ।

कवि-विद्यार्थी :

उपर्युक्त पाठशाला द्वारा महाराव लखपतिसिंह ने गुजरात में हिन्दी काव्य-रचना की प्रवृत्ति को अभूतपूर्व प्रेरणा और प्रोत्साहन देकर उसका पोषण किया । उनकी साहित्यिक प्रवृत्तियों का यह स्थायी स्मारक कहा जा सकता है । महाराव की इस प्रवृत्ति के दूरगामी परिणाम देखने को मिलते हैं । उनके समय (लगभग सन् १७४९ ई०) से लेकर लगभग दो सौ वर्षों (सन् १९४७ ई०) तक चलने वाली इस पाठशाला से सैकड़ों कवि-विद्यार्थी निकले जिन्हों ने गुजरात के हिन्दी साहित्य की श्रीवृद्धि की । प्राप्त जानकारी के अनुसार ऐसे कवियों का परिचय दिया जा रहा है ।

ब्रह्मानंद:

ब्रह्मानंद का जन्म सं० १७७२ वि० माना गया है । भुज की ब्रजभाषा पाठशाला में अध्ययन करने वाले कवि-विद्यार्थियों में कदाचित् ब्रह्मानंद सब से अधिक यशस्वी कवि हैं । ये स्वामिनारायण सम्प्रदाय के संत थे तथा उनका मूल नाम लाडू बारोट था । उन्होंने ब्रजभाषा में जो रचनाएँ कीं उनके नाम इस प्रकार हैं : " धर्मवंश प्रकाश ", " ब्रह्मविलास ", " वर्तमान विवेक ", " उपदेश चिन्तामणि " तथा " छंद रत्नावली "

१६ "भुज (कच्छ) की ब्रजभाषा पाठशाला", पृ० ५१ ।

आदि ।[१७]

लाल कवि :

महाराव लखपतिसिंह के पुत्र गौड़ के लिये उन्होंने " गौड़ रत्नाकर " नामक ग्रंथ लिखा । भुज की व्रजभाषा पाठशाला के आश्रय में उन्होंने व्रजभाषा के काव्यशास्त्र का अध्ययन किया । ये महाराव गौड़ के राजकवि थे ।

गोप :

गोपाल जी उनका पूरा नाम था । वे " हम्मीर सर बावनी " लिख कर पाठशाला की परीक्षा में ~~उत्तीर्ण~~ उत्तीर्ण हुए । उनके अन्य ग्रन्थों के नाम इस प्रकार बताये जाते हैं :

" छन्द विधिगति चन्द्रिका ", अलंकार निधि", " शौर्य बावनी ", शब्द विभूषण ", " खेंगार उद्‌वाहमंद पीयूष " , " काव्य प्रभाकर", " तत्वाम बोध", " मलिंद शतक ", " रसाल मंजरी " ।

कवि-विद्यार्थी-परंपरा :

भुज की व्रजभाषा पाठशाला में दो प्रकार के विद्यार्थी पढ़ते थे । एक वे जो पाठशाला की गुरु-परंपरा के थे और विद्या प्राप्त करके उसी पाठशाला में गुरु पद प्राप्त करते थे तथा दूसरे जो दूर दूर से वहाँ जा कर परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् अपने अपने इच्छित स्थान पर चले

१७ द्रष्टव्य :

(अ) " कवीश्वर दलपतराम " लें० कवि न्हानालाल, पृ० २३२ ।

(आ) " भुज (कच्छ) की व्रजभाषा पाठशाला", पृ० ३८ ।

जाते थे । गुरु परम्परा के कवियों का नामोल्लेख ऊपर किया गया है । यहाँ ऐसे कवि-विद्यार्थियों के नाम दिये जा रहे हैं जो भुज की पाठशाला में पढ़े थे : वैष्णवानन्द स्वामी, धीरज गढ़वी, दलपतराम, जीवराम अजरामर, गोविंद गिल्लाभाई, पूनजी गढ़वी, कुसुम कवि, केसर कवि, खेंगार गढ़वी, रघिराज कवि, शक्तिदान हमीर जी, शंकरदान जेठीदान, वीरम जी गोपाल जी गढ़वी, जसकरणदान अचलदान जी आदि ऐसे अनेक नाम प्राप्त होते हैं ।

आधुनिक काल के आरम्भ तक इस पाठशाला का प्रभाव रहा। गुजराती साहित्य के आधुनिक युग के आरंभकर्ताओं में से कवि दलपतराम भी भुज की ब्रजभाषा पाठशाला से प्रभावित हुए थे । उस समय में भुज की पाठशाला में पढ़कर लौटे कवि का सत्कार, सम्मान आदि होता था । उसका काव्यशास्त्रीय ज्ञान सर्वमान्य माना जाता था । यहाँ तक कि यदि किसी छन्द के सम्बन्ध में मतभेद उपस्थित होता तो कहा जाता था कि परीक्षार्थ उस छन्द को भुज भेजा जाय । [१८]

उपर्युक्त तथ्यों से यह सहज ही स्पष्ट हो जाता है कि महाराव लखपतिसिंह द्वारा प्रस्थापित ब्रजभाषा पाठशाला का कितना व्यापक एवं दीर्घकालीन महत्त्व रहा । इस प्रकार हिन्दी साहित्य के प्रचार एवं प्रसार में इस पाठशाला का अथवा उसके संस्थापक महाराव लखपतिसिंह का असाधारण ऐतिहासिक महत्त्व है ।

निष्कर्ष :
ooo.ooo

महाराव लखपतिसिंह की उपर्युक्त साहित्यिक प्रवृत्तियों से

oooooooo

१८ (अ) जोधपुर निवासी श्री सौभाग्यसिंह शेखावत जी से लेखक की बातचीत के आधार पर ।
(आ) द्रष्टव्य : " कवीश्वर दलपतराम " ले० कवि न्हानालाल, भाग-१, पृ० १६६ ।

निम्नलिखित निष्कर्ष निकलते हैं :

(१) इन साहित्यिक प्रवृत्तियों के द्वारा उनके जीवन का रचनात्मक पक्ष सामने आता है ।

(२) उन्होंने परंपरागत चारण-परंपरा के होते हुए भी ब्रजभाषा पाठशाला की योजना बनाई, सुयोग्य आचार्यों का चुनाव किया तथा उनको दरबारी चारण कवियों से अलग रखा । इस से ज्ञात होता है कि महाराव लखपतिसिंह ने ब्रजभाषा के कवियों की समुचित रक्षा, पोषण एवं संवर्द्धन किया ।

(३) महाराव लखपतिसिंह ने ब्रजभाषा काव्यशास्त्र की शिक्षा को स्थायी महत्त्व दिया । तदर्थ उन्होंने ब्रजभाषा पाठशाला के निर्वाह की समुचित एवं दृढ़ व्यवस्था की । उनके परवर्ती शासकों में भी ब्रजभाषा के प्रति प्रेम बना रहा और यह पाठशाला निर्बाध गति से चलती रही ।

(४) कच्छ की ब्रजभाषा पाठशाला केवल एकक्षेत्रीय महत्त्व की न रह कर, पश्चात् गुजरात, राजस्थान और मध्यप्रदेश के लिये भी एक सामूहिक विद्याकेन्द्र बन गई । हिन्दी की काव्य-परंपरा को जीवित रखने में इसने बड़ा योग दिया । आठ हज़ार पद लिखनेवाले ब्रह्मानंद, गुजरात के प्रसिद्ध कवीश्वर दलपतराम इसकी देन हैं ।

(५) ब्रजभाषा पाठशाला का पाठ्यक्रम हिंदी और अहिंदी-प्रदेश को जोड़नेवाली बहुत बड़ी कड़ी है । हिन्दी-प्रदेश की प्रसिद्ध आचार्य परंपरा जिस में केशवदास, चिंतामणि, राजस्थान के

जसवंतसिंह, मेड़ता के सेवक महासिंह, को इस पाठ्यक्रम में महत्वपूर्ण स्थान दिया गया था । सेवक महासिंह की " भाषा छंद शृंगार " यहाँ पाठ्यक्रम में थी जो हिंदी-प्रदेश को भी अपरिचित थी ।[१९]

०००

००००००००

१९ इस महत्वपूर्ण सूचना के लिये लेखक अपने निर्देशक डॉ० मदनगोपाल जी गुप्त का आभारी है ।